नियमगिरी का पुर्नभ्रमण

आशीष कोठारी

ओडिशा स्थित नियमगिरी पहाड़ियों पर निवास करने वाले डोंगरिया-कौंध आदिवासी समुदाय ने न केवल बहुराष्ट्रीय कंपनी वेदांता को

हाथ खींचने पर मजबूर कर दिया बल्कि उसकी पीठ पर हाथ रखने वाली सर्वशक्तिमान केन्द्र व राज्य सरकारों को भी इस बात को बाध्य कर दिया कि वे विकास के अपने दृष्टिकोण पर पुनर्विचार करें।

नियमगिरी, जो कि इस इलाके में खनन पर उतारू बहुराष्ट्रीय कंपनी वेदांता और डोंगरिया कौंध आदिवासी समूह के मध्य ऐतिहासिक संघर्ष का गवाह है, वहां पहली बार मैं पिछले हफ्ते ही गया था। सवाल उठता है तो फिर मैंने इस लेख का शीर्षक 'नियमगिरी पुर्नभ्रमण' क्यों दिया ? वैसे यह बात अंशत: सच है, क्योंकि मैंने अपने साथियों से इसके बारे में इतना कुछ सुन रखा था कि मुझे महसूस होता था कि मैं वहां पहले जा चुका हूं।

इस स्थान को हॉलीवुड की फिल्म 'अवतार' का सजीव संस्करण कहा जा सकता है। यहां पर भी लोगों ने वेदांत को बोरिया-बिस्तर बांधकर जाने पर मजबूर कर दिया है। ओडिशा के विशाल व सघन जंगलों और जलधाराओं के बीच कृषि की

पुरातन पद्धति अपनाने वाले डोंगरिया कौंध समुदाय को भारत का 'विशिष्ट संकटग्रस्त आदिवासी समूह' पुकारा जाता है। पहले इन्हें 'आदिम' कहा जाता था और ये सांस्कृतिक, आर्थिक एवं पारिस्थितिकीय दृष्टिकोण से सर्वाधिक संकटग्रस्त समूह है। परंतु उनका अपना एक वैश्विक दृष्टिकोण है और उनके पास सहस्राब्दियों पुरानी पद्धतियां मौजूद हैं । इसके अलावा उनके पास ज्ञान का अकूत भंडार एवं प्रकृति से ऐसा जीवंत रिश्ता मौजूद है, जिसे अनेक कथित 'सभ्य' लोग भूल चुके हैं ।

डोंगरिया कौंध उस सबका प्रतीक है, जिसे कि भारतीय राज्य एवं शहरी शिक्षित वर्ग इसलिए ''पिछड़ा'' कहता है क्योंकि उनके यहां साक्षरता व तकनीक का सामान्य स्तर अनुपस्थित है, वे झूम खेती करते हैं, जीववाद को मानते हैं, वहां अस्पताल और विद्यालयों का अभाव है, गांव पहुंचने के रास्ते कच्चे हैं, बिजली नहीं है,आदि-आदि । परंतु ऐसे तमाम चरित्रगत सारे मापदंडों को ठेंगा दिखाते हुए उन्होंने एक ऐसे निजी बहुराष्ट्रीय निगम पर विजय प्राप्त की है, जिसके पास सभी 'सभ्य' शक्तियां मौजूद थीं । परंतु डोंगरिया कौंध सतर्क हैं और उन्हें पूरा विश्वास है कि वह अभी भी कंपनी को किसी भी तरह के खनन की अनुमति नहीं देंगे।

मैं कल्पवृक्ष संस्था के अपने सहयोगियों के साथ इसलिए नियमगिरी गया था कि मैं विकास और कल्याण के संबंध में डोंगरिया कौंध समुदाय के विचार समझ पाऊं। जाहिर है उन्होंने खनन को तो अस्वीकार कर दिया है, लेकिन क्या उन्होंने विकास की धारणा को ही निरस्त कर दिया है ? क्या वे कह रहे है कि वे प्रसन्न थे और उन्हें अकेला छोड़ दिया जाए ? क्या वे 'बाहर' से आने वाली प्रत्येक वस्तु को अस्वीकार कर रहे हैं या उनमें से कुछ को यानि सरकारी योजनाएं अपनाना चाहते हैं ? क्या उनके समुदाय के भीतर युवाओं और महिलाओं में इसे लेकर कोई भिन्न विचार है ?

कुछ पारंपरिक एवं संघर्ष के नेताओं के साथ सुंदर स्थानों पर बसे अनेकडोंगरिया कौंध गांवों से गुजरते हुए महसूस हुआ कि खनन को अस्वीकार करने के पीछे उनके पास सशक्त आध्यात्मिक एवं औचित्यपूर्ण आधार मौजूद हैं। उस क्षेत्र के आध्यात्मिक स्त्रोत नियम राजा द्वारा बनाए गए नियमों में शामिल हैं ।

वनों एवं नदियों का संरक्षण बजाए व्यक्तिगत संपत्ति के संसाधनों का साझा स्वामित्व, श्रम एवं फलों की हिस्सेदारी व जैव संस्कृति उनके पास उपलब्ध धार्मिक एवं गैरधार्मिक तत्वों का गुलदस्ता है। इस तरह की स्थिति में खनन एवं बड़ी सड़कें और कारखाने जैसा विशाल आक्रामक विकास एकवर्जित शब्दभर है।

लडोसिकाका, बारी पिडिकाका एवं डाधी पुसिकावेरे जैसे नेता इस बात को लेकर सुनिश्चित थे कि वे नियमगिरी को मुनिगुडा, रायागाधा और भुबनेश्वर जैसे शहर में परिवर्तित नहीं करना चाहते जहां पर कि बिना बीमार पड़े न तो आप पानी पी सकते हैं न ही सांस ले सकते हैं, जहां पर बाहर जाते समय लोगों को घरों में ताले लगाना पड़ते हैं और जहां महिलाओं को रोजाना परेशान किया जाता हो। वे जानते हैं कि उनके क्षेत्र में सड़क निर्माण का अर्थ है शोषणकारी शक्तियों का प्रवेश जिससे उनके पर्यावरण एवं संस्कृति दोनों को ही खतरा पैदा होगा। उन्हें इस बात का भी भान है कि वन अधिकार अधिनियम के माध्यम से व्यक्तिगत भूखंड प्राप्त करने का अर्थ है व्यक्तिवाद को बढ़ावा एवं वनों की नए सिरे से कटाई। समुदाय ने मांग की है कि संपूर्ण क्षेत्र को वन कानून के अंतर्गत प्राकृतिक वास क्षेत्र के रूप में मान्यता दी जाए और नियम राजा के नाम से इस हेतु एक ही स्वत्व (स्वामित्व) अधिकार पत्र जारी किया जाए। उन्हें उम्मीद है कि इस तरह से वह विध्वंसकारी ताकतों को इलाके से बाहर रख पाने में सफल होंगे।

दुर्भाग्यवश पहले भी इस तरह के आक्रमण हो चुके हैं और इनमें से कई तो काफी कपटपूर्ण भी थे। शासन द्वारा सद्इच्छा से लेकिन पूर्णतया अव्यावहारिक 'कल्याण' योजनाएं (डोंगरिया कौंध विकास एजेंसी जैसी संस्थाओं के माध्यम से) आदिवासियों को 'सभ्यता' के लाभ प्रदान करने हेतु तैयार की गई हैं। यहां के बहुत कम गांवों में विद्यालय कार्यरत हैं। अतएव आदिवासी बच्चों को आश्रमशालाओं में भर्ती किया जाता है जहां पर उन्हें ओडिया भाषा में शिक्षा दी जाती है। जबकि डोंगरियां कौंध एक सर्वथा पृथक ''कुई'' बोली बोलते हैं। आदिवासी संस्कृति को प्रभुत्वशाली मुख्यधारा से बदला जा रहा है और उनके भीतर यह भावना घर कराई जा रही है कि 'आदिम' आदिवासी जीवन को तुरंत प्रभाव से आधुनिक विकास से बदला जाना आवश्यक है। ***

धरती माँ का धानी चीर

डॉ. गार्गीशरण मिश्र मराल

हरे भरे जंगल ही तो है धरती मां का धानी चीर।
पवन चले तो लहराता यह धरती मां का धानी चीर।

धरती मां ने पाला हमको
हमने उसका चीर हरा,
बेरहमी से जंगल काटे
वन–जीवन में दर्द भरा,

सोचा नहीं बढ़ेगी इससे जग के हर प्राणी की पीर।
धरती बंजर हो जायेगी नहीं गिरेगा नभ से नीर।

गर्म हवाओं की लपटों से,
झुलसेगा सारा संसार,
बढ़ जायेगा और अधिक जो
धरती मों को चढ़ा बुखार,

प्यासी धरती, प्यासे प्राणी खे देंगे सब अपना धीर।
तड़प उठेंगे जन, पशु पक्षी स्वाकर सब अकाल का तीर।

हिम शिखरों की बर्फ गलेगी,
जल बनकर पहुँचेगी सागर,
सागर तट के घर डूबेंगे
उफनेगी सागर की गागर,

मौत करेगी ताण्डव सब की लुट जायेगी धन–जागीर।
वृक्ष लगाकर, वन सरसाकर, चले सँवारो जग–तकदीर।

***